International Research Vision (Int. Res. Vn.)
ISSN: 2454-3721
Volume 3 Issue 1: 11-14, 2017

महिलाओं में सामाजिक–राजनैतिक जागरूकता: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

वीणा
शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, ल. ना. मि. वि., दरभंगा

सारांश

प्रस्तुत शोध अध्ययन "महिलाओं में सामाजिक–राजनैतिक जागरूकता: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (पटना शहर की महिलाओं के संदर्भ में) किया गया। पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की शिक्षा, प्रशिक्षण, चिकित्सा, रोजगार एवं स्वास्थ्य के बारे में भी कम ध्यान दिया जाता है। भारत में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की मृत्यु–दर भी अधिक है, अतः स्त्री–पुरूष अनुपात में स्त्रियों की कमी पायी जाती है। इन सबके लिए हमारी सदियों से चली आ रही विरासत भी उत्तरदायी है।

शीर्षक विश्लेषण

महिलाओं में सामाजिक जागरूकता:

हिन्दू स्त्रियों की स्थिति को सुधारने एवं एक व्यक्ति में उसकी पहचान के लिए भारतीय संविधान में धर्म, रंग, जाति एवं लिंग के आधार पर भेद–भाव को समाप्त करने की बात कही गई है। विवाह, तलाक, दहेज, बलात्कार, सती–प्रथा, सम्पत्ति उत्तराधिकार, समान वेतन, अनैतिक व्यापार निषेध एवं गोद लेने से संबंधित अनेक अधिनियम बनाए गए हैं जो स्त्रियों के पक्ष में हैं। किन्तु ये अधिनियम अधिक कारगर सिद्ध नहीं हुए हैं। कई महिलाए एवं सार्वजनिक मंचों से भी स्त्रियों को पुरूषों के समकक्ष अधिकार दिलाने एवं उन पर अत्याचार रोकने के लिए आवाज उठायी गयी है फिर भी स्त्रियों की स्थिति में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई है।

किन्तु इन स्थिति के लिए केवल पुरूष को ही दोषी नहीं ठहराया जा सकता। एक मत यह है कि स्त्रियां ही स्त्रियों की प्रगति में बाधक हैं और उन पर किए जाने वाले अत्याचारों के लिए स्वयं ही दोषी हैं। दहेज के लिए बहू को जलाने या प्रताड़ित करने में सास मुख्य रूप से दोषी रही हैं, परिवार में बहू एवं पुत्री को अधिकारों से वंचित करने एवं नियन्त्रण लादने में सास एवं मां के रूप में स्त्री ही जिम्मेदार हैं।

स्त्रियों की स्थिति में सुधार हेतु उन्हें शिक्षा, प्रशिक्षण एवं रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने होंगे, उनमें अपने अधिकारों के प्रति चेतना पैदा करनी होगी, शोषण एवं दमन के विरुद्ध उन्हें संगठित होकर संघर्ष करना होगा, परिवार एवं समाज में उन्हें पुरुष से पृथक् अपनी एक व्यक्ति के रूप में पहचान बनानी होगी।

स्त्रियों की विभिन्न क्षेत्रों में बदली हुई स्थिति को देखकर कुछ व्यक्ति क्षुब्ध हुए हैं तो कुछ ने प्रसन्नता प्रकट की है। इस सन्दर्भ में यह प्रश्न उठता है कि क्या नारी को लोक–जीवन, सार्वजनिक–जीवन और राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना चाहिए अथवा नहीं अन्य शब्दों में, लोक–जीवन में उनका प्रवेश वांछनीय है या नहीं? इस बारे में दो मत पाए जाते हैं–एक मत उनके लोक–जीवन में प्रवेश के विपक्ष में हैं और दूसरा पक्ष में। जो लोग विपक्ष में हैं उनका कहना हैं कि (1) स्त्रियों का कार्य–क्षेत्र घर हैं, उन्हें पति सेवा तथा बच्चों के लालन–पालन, आदि का कार्य कर अच्छे परिवार के निर्माण में योग देना चाहिए क्योंकि परिवार ही समाज का आधार है। सार्वजनिक कार्य करने पर घर की उपेक्षा होगी, बच्चों का समुचित पालन–पोषण नहीं होगा, वे अनियन्त्रित एवं आवारा हो जायेंगे और परिवार विघटित होगा। (2) राजनीति और लोक–जीवन में भाग लेने पर स्त्रियों में यौन स्वच्छन्दता एवं अनैतिकता फैलेगी। (3) परिवार की धार्मिक क्रियाओं का सम्पादन सुचारु रूप से नहीं हो सकेगा। (4) स्त्रियॉ कोमल स्वभाव की होने से बाह्य जीवन की कठोरता एवं कठिनाइयों का सफलतापूर्वक मुकाबला नहीं कर सकेंगी। (5) चूँकि स्त्रियां प्रजनन के कार्य से संबंधित हैं, अतः

सार्वजनिक जीवन में भाग लेने की उनकी सीमा है। (6) स्त्रियों का लोक–जीवन में भाग लेना भारतीय सामाजिक मूल्यों के विपरीत है। (7) कई व्यक्ति स्त्रियों की शारीरिक एवं मानसिक क्षमता को पुरुषों से निम्न मानते हैं, अतः वे उचित निर्णय लेने में असमर्थ होती हैं। इन सभी दलीलों के आधार पर कुछ व्यक्ति स्त्रियों के लोक–जीवन में प्रवेश को अवांछनीय मानते हैं।

दूसरी ओर कई व्यक्ति स्त्रियों के राजनीति और लोक–जीवन में प्रवेश के पक्ष में हैं। उनका मत है कि आज जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में स्त्रियों को सौंपे गए दायित्वों का यदि हम मूल्यांकन करें तो पाएंगे कि उन्होनें सराहनीय कार्य किए हैं तथा कई क्षेत्रों में तो वे पुरुषों से बढ़कर योगदान दे पायी हैं। वे इस बात को उचित नहीं मानते हैं कि स्त्रियों के राजनीतिक और लोक–जीवन में प्रवेश करने से परिवार विघटित हो जाएगा। परिवार का संचालन एवं संगठन केवल स्त्री का कार्य ही नहीं है, वरन् स्त्री व पुरुष दोनों का है। रूढ़िवादी सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने के लिए स्त्रियों को राजनीति और लोक–जीवन में प्रवेश की इजाजत न देना भी पिछड़ेपन का सूचक है, यह पुरुषों की स्वार्थी–प्रवृत्ति एवं शोषण की नीति को प्रकट करता है। वर्तमान में प्रजातंत्रीय विचारों की मांग है कि स्त्री–पुरूषों को समान अधिकार प्राप्त हों। यदि स्त्रियॉं शिक्षा ग्रहण कर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करेंगी तो वे समाज को उनके कुप्रथाओं, अन्धविश्वासों, आडम्बरों, रूढ़ियों, आदि से मुक्त कर सकेंगी और परिवार तथा समाज की बदलते समय की मांग के अनुरूप सेवा कर सकेंगी। राजनीति में आने पर वे अपने अधिकारों की रक्षा अच्छी प्रकार से कर सकेंगी। किन्तु इस कारण स्त्रियॉं इतनी स्वच्छन्द न हो जाएं कि वे अपना संतुलन खोकर पथ–भ्रष्ट हो जाऍं।

महिलाओं में राजनैतिक जागरूकताः

अब तक के विवेचन से स्पष्ट है कि अनेक कारणों के संयुक्त प्रभाव के फलस्वरूप स्त्रियों की स्थिति में काफी परिवर्तन आया है, ग्रामीण क्षेत्रों में कम, परन्तु नगरीय क्षेत्रों के मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग की स्त्रियों में अधिक। भारत में महिलाओं का साक्षरता प्रतिशत 2011 की जनगणना के अनुसार 65º46ः हो गया है। अनेक संवैधानिक राजनीतिक और आर्थिक कारणों ने स्त्रियों की स्थिति को परिवर्तित करने में विशेष योग दिया है। इन कारणों का उल्लेख इसी अध्याय में किया गया है। जहॉं पहले स्त्रियां घर की चहारदीवारी तक ही सीमित थीं, वहां ग्राम पंयायतों, सामाजिक उत्सवों तथा अनुशासनात्मक अवसरों पर उनकी सामूहिक भागीदारी बढ़ गई है। अब तो पंचायती राज संस्थाओं में 50ःस्थान महिलाओं के लिए आरक्षित है। अब महिलाऍं ग्राम पंचायतों की सदस्य भी है और उनकी (32) स्त्रीशक्ति पुरस्कार–वर्ष 1999 में शुरू किये गये यह पुरस्कार प्रतिवर्ष भारत के इतिहास में पांच प्रसिद्ध महिलाओं; कन्नाकी, माता जीजाबाई, देवी अहिल्याबाई होलकर, रानी लक्ष्मीबाई तथा रानी गेदिन ल्यू के नाम पर दिए जाते हैं। ये पुरस्कार उन अलग–अलग महिलाओं के सम्मान तथा उनकी उपलब्धियों के अभिज्ञान में दिए जाते हैं जिन्होंने कठिन परिस्थितियों में सफलता प्राप्त की है और महिलाओं के अधिकारों हेतु लड़ी हैं।

समता की खोजः

आधुनिक युग में नारी ने पुरुषों के समकक्ष स्थान एवं अधिकार पाने के लिए कई स्त्री आन्दोलनों एवं संगठनों को जन्म दिया है। दुनिया के दूसरे देशों में स्त्री स्वातन्त्र्य आन्दोलन चले और स्त्रियों को अपने अधिकार पाने के लिए लम्बा संघर्ष करना पड़ा। भारतीय समाज भी एक पुरुष प्रधान एवं पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था को मानने वाला समाज है जिसमें स्त्रियों का कार्य–क्षेत्र घर की चहारदीवारी तक ही सीमित रहा है। आर्थिक रूप से वे सदैव पुरुषों पर निर्भर रही हैं तथा उन्हें शिक्षा एवं बाह्य जगत् से भी दूर रखा गया है। किन्तु पिछले कुछ वर्षों से भारत में कई महिला संगठन बने हैं, प्रमुख रूप से नगरों में। इन संगठनों ने कई मुद्दे उठाए हैं तथा उनको लेकर आन्दोलन एवं प्रदर्शन भी किए गए हैं। इन मुद्दों में प्रमुख हैं–बढ़ती हुई महंगाई, पुरुषों के समान स्त्रियों को अधिकार देने तथा दहेज के कारण महिलाओं को जला देना या प्रताड़ित करना, बलात्कार, शोषण, हत्या, स्त्रियों के साथ अमानवीय व्यवहार एवं उन्हें बेइज्जत करना तथा पुलिस की ज्यादतियां, आदिं इन मांगों के समर्थन में प्रदर्शनों, संगठनों एवं कार्यक्रमों में भाग लेने वाली अधिकांश महिलाएं मध्यवर्गीय ही है। इनमें से कई कामकाजी महिलाएं हैं। महिलाओं ने बाहर ही नहीं परिवार में भी समानता एवं अपने अधिकारों की मांग की है। शिक्षित एवं स्वयं अर्जन करने वाली महिलाएं अब पहले की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र हैं, वेक्लबों में

जाने लगी हैं तथा विवाह–शादी के चयन में अपनी पसन्द या नापसन्द को अधिक महत्व देती हैं, पहले की तरह इन पर कोइ भी व्यक्ति जीवन–साथी के रूप में थोपा नहीं जाता। पारिवारिक निर्णयों में उनकी सलाह ली जाती है। इस प्रकार अब महिलाएं धीरे–धीरे सास–ससुर एवं परिवार की दासता से मुक्त हो रही हैं। यद्यपि अब भी कई बार कमाकर स्त्री अपनी कमाई सास–ससुर के हाथों में ही देती हैं।

राजनेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं महिला संगठनों ने नारी चेतना पैदा करने एवं उन्हें अपने अधिकारों से अवगत कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इसी के परिणामस्वरूप सन् 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया। सन् 1971 में भारत सरकार ने स्त्रियों की प्रस्थिति के बारे में एक समिति गठित की जिसने 1974 में स्त्रियों की उन्नति के बारे में कई महत्वपूर्ण सुझाव दिए जिनका सर्वत्र स्वागत किया गया। स्त्रियों की समस्याओं एवं उनके समाधान हेतु एक अखिल भारतीय संगठन भी है। अनेक राज्यों में महिला विकास निगम स्थापित किए गए हैं जो महिलाओं को तकनीकी परामर्श देने तथा बैंक तथा अन्य संस्थानों से ऋण दिलाने एवं बाजार की सुविधा दिलाने का प्रयत्न करते हैं। भारत में महिला उद्यमिता में भी प्रगति हुई हैं और आज अनेक महिलाएं अपने स्वयं के कारखाने एवं उद्योग चला रही हैं। आज अनेक महिलाएं सरकारी एवं गैर–सरकारी नौकरियों में कार्यरत् हैं, वे प्रशासक, राजनेता एवं उच्च राजकीय सेवाओं में पुरुषों के समकक्ष कार्य कर रही हैं।

स्त्री–पुरुष सम्बन्ध एवं व्यक्ति के रूप में स्त्री की पहचानः

इसी सन्दर्भ में प्रश्न उठता है कि क्या पुरुषों से स्वतन्त्र स्त्रियों की स्वतन्त्र पहचान सम्भव हैं? इस प्रश्न का उत्तर सैद्धान्तिक दृष्टि से हां में दिया जा सकता हैं, किन्तु व्यवहार में नहीं। भारतीय समाज में स्त्री को स्वतन्त्र होने योग्य नहीं माना गया हैं और पुरुषों के अभाव में उनका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि स्त्रियां कभी भी स्वतन्त्र में उनका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि स्त्रियां कभी भी स्वतन्त्र रहने के योग्य नहीं हैं। बचपन में पिता, युवावस्था में पति एवं वृद्धावस्था में उन्हें पुत्र के संरक्षण में रहना चाहिए। इस प्रकार हमारे यहां स्त्री की पहचान पुत्री, पत्नी और मां के रूप में की गई हैं। यह बात यूरोप एवं चीन में भी स्वीकार की गई हैं।

पूंजीवाद में मजदूर–मालिकों के बीच शोशणकारी सम्बन्धों की कल्पना की गई हैं। समाजवादियों का मत है कि स्त्रियों पर पुरुषों का आधिपत्य का सम्बन्ध भी पूंजीवादी समाज के लक्षण हैं समाजवादी समाज में ही वे इस बन्धन से मुक्त होकर पुरुषों के समकक्ष लायी जा सकती हैं। स्त्रियों का पुरुषों के अधीन होने का एक कारण उनकी पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता माना जाता हैं, किन्तु यह बात भी पूरी तरह सच नहीं है क्योंकि गांवों में निम्न वर्ग की स्त्रियां जो खेती एवं मजदूरी करके अर्जन करती हैं, वे भी पुरुषों के अधीन ही हैं। स्त्रियों को पराधीन बनाने वाली संस्था केवल पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था ही नहीं हैं, वरन् सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था है जिसमें स्त्रियों के साथ कठोर व्यवहार किया जाता है। पुरुषों का अहंवाद भी इसके लिए उत्तरदायी हैं।

बड़े–बड़े नगरों जैसे, मुम्बई, पुणे, दिल्ली, आदि में चार उद्देश्यों को लेकर महिला आन्दोलन चलाए गए हैं, वे हैं' (1) स्त्रियों में जागरूकता पैदा करना, उन्हें अपने राजनीतिक अधिकारों के प्रति संवेदनशील बनाना तथा परिवार में दमन और अश्लील साहित्य एवं पोस्टरों का विरोध करना; (2) महिलाओं के जीवन–स्तर और कार्य–दशाओं में परिवर्तन लाना, वेतन–वृद्धि, प्रसूताओं को अवकाश एवं चिकित्सा की सुविधाएं देना, आदि; (3) अपने काम के लिए गृहणियों को सामाजिक प्रतिष्ठा के साथ–साथ प्रतिफल प्रदान करना; (4) राजनीतिक दमन, मकानों की समस्या तथा कीमतों में वृद्धि के विरुद्ध महिलाओं को संगठित करना। किन्तु ये सभी प्रश्न नगरीय महिलाओं से ही सम्बन्धित हैं, ग्रामीण महिलाओं के सन्दर्भ में बहुत कम ही प्रयास हुए हैं।

महिला आन्दोलनों का संगठन एवं संचालन प्रमुखतः नगरीय सफेदपोश मध्यमवर्गीय महिलाओं एवं कामकाजी महिलाओं द्वारा किया गया हैं। इनके द्वारा महिला पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित की जाती हैं तथा महिला सभाओं एवं गोष्ठियों का आयोजन भी किया जाता है। स्त्रियों से सम्बन्धित अनेक अध्ययन भी हुए हैं। जिनमें स्त्रियों की प्रस्थिति, परिवार में उनकी भूमिका, शिक्षा, उनकी आर्थिक व कानूनी प्रस्थिति एवं राजनीतिक भागीदारी, स्त्रियों की अधीनता के कारण, कार्य सहभागिता, आन्दोलनों में भूमिका, पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्रियां, आदि विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई हैं।

भारत में स्त्री की एक व्यक्ति के रूप में पहचान इन सब प्रयत्नों के बावजूद भी नहीं हो पायी हैं। परिवार में आज भी उसे एक पुत्री, पत्नी, मॉ सास एवं पुत्र–वधू के रूप में पहचाना जाता है न कि एक व्यक्ति के रूप में भारतीय महिला के परिवार के बाहर उन्हीं लोगों से गतिविधियों में भाग भी लेती हैं ग्रामीण क्षेत्रों में महिला पंच और सरपंच विकास कार्यों में योग देने लगी हैं। वे सामूहिक गतिविधियों में हिस्सा भी लेने लगी हैं, लेकिन देखने में यह आया है कि ग्राम पंचायतों में अधिकांश महिलाएं अशिक्षा तथा राजनीतिक व सामाजिक चेतना के अभाव में स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय नहीं ले पाती हैं। अब महिलाएं सार्वजनिक उत्सवों में अधिक सक्रियता के साथ भाग लेने लगी हैं। वे चुनाव के समय राजनीतिक दलों के नेताओं के रूप में भी सामने आने लगी हैं अब वे राजनीतिक दलों की सभाओं में सम्मिलित होती हैं और प्रत्याशियों के चुनाव प्रचार में भी बढ़–चढ़ कर कार्य करती हैं। धार्मिक आयोजनों में तो महिलाओं की भागीदारी पहले से ही काफी रही हैं। जहां कहीं रामायण, भगवद्गीता अथवा अन्य किसी विषय पर धार्मिक प्रवचन होते हैं, वहां उन स्थानों पर महिलाओं की भागीदारी पुरुषों से अधिक होती है। होली, दीपावली, दशहरा, ईद मिलन व क्रिसमस, आदि अवसरों पर महिलाओं में काफी उत्साह देखने को मिलता है। वे भी पुरुषों के समान ही अपनी भागीदारी निभाती हैं।

महिलाओं की स्थिति में मूल्यों, विश्वासों और आदर्श प्रतिमानों की दृष्टि से भी काफी परिवर्तन आया है। उसकी पति को परमेश्वर मानने की धारणा भी बदली है। अब उसे दासी नहीं समझा जाता है, उसे पुरुष के समकक्ष माना जाता है। आज स्त्रियां प्रेम विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा–पुनर्विवाह के पक्ष में अपना विश्वास व्यक्त करने लगी हैं। वर्तमान में समतावादी मूल्यों का स्त्रियों में प्रचार–प्रसार होने लगा है। अब इस धारणा में भी परिवर्तन आ रहा है कि स्त्रियों का कार्य क्षेत्र केवल बच्चों का लालन–पालन और घर की देखरेख करना है। आज शिक्षित महिलाएं न केवल उच्च पदों पर आसीन हैं बल्कि उद्यमिता के क्षेत्र में भी आगे आई हैं, उच्च पदों पर आसीन महिलाएं आज यह प्रमाणित कर रही हैं कि वे किसी भी क्षेत्र में पुरुषों की तुलना में कम काबिल नहीं हैं। आज उन्हें भी पुरुषों के समान व्यक्तित्व के विकास मे सभी अवसर प्राप्त हैं स्त्रियों की इस प्रकार की परिवर्तनशील स्थिति विशेशतया नगरीय क्षेत्रों में ही मध्यम और उच्च वर्ग की स्त्रियों में देखने को मिलती है। महिलाएं कर्मकाण्डीय उत्सवों में भी बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेने लगीं हैं। जो कर्मकाण्ड पहले पुरुषों के लिए ही निर्धारित थे, अब उन्हें स्त्रियां भी करने लगी हैं उदाहरणार्थ मृत व्यक्ति की चिता को अग्नि देने का कार्य अब तक पुरुष ही किया करते थे, किन्तु अब यह कार्य महिलाएं भी करने लगी हैं। कर्मकाण्डीय उत्सवों में महिलाओं की भागीदारी पहले से ही रही हैं, जन्म के समय किए जाने वाले कर्मकाण्डों में तो अधिकतर महिलाएं ही भाग लेती हैं।

स्वतन्त्रता–प्राप्ति के पश्चात् स्त्रियों की परिवर्तित स्थितिः

स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद पिछले करीब 58 वर्षों में स्त्रियों की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। अब उनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ हैं। डॉ. श्रीनिवास के अनुसार, पश्चिमीकरण, लोकिकीकरण तथा जातीय गतिशीलता ने स्त्रियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में काफी योग दिया हैं। वर्तमान में स्त्री–शिक्षा का प्रसार हुआ है। कई स्त्रियां औद्योगिक संस्थाओं और विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी करने लगी हैं अब वे आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होती जा रही हैं। उनके पारिवारिक आधिकारों में वृद्धि हुई हैं। अनेक सामाजिक अधिनियमों ने स्त्रियों की निर्योग्यताओं को समाप्त करने और उन्हें सामाजिक कुरीतियों से छुटकारा दिलाने में योग दिया है। अब स्त्रियों को अपने व्यक्तित्व के विकास हेतु काफी सुविधाएं प्राप्त हैं ।

संदर्भ सूची

1. राधा के. मुखर्जी, वीमेन्स इन एनसियेन्ट इंडिया, 1985.
2. जानकी देवी बजाज, मेरी जीवन यात्रा, समर्पण और साधना.
3. मायल खैरावादी, स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इस्लामिक सोसाइटी, रामपुर, यू.पी.
4. अल्तेकर, पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेयान
5. ऋगवेद.
6. महाभारत.
7. रामबिहारी सिंह तोमर, भारतीय समाज, संस्कृति एवं संस्थाऍं, 1970
8. हनुमान प्रसाद पोद्दार, दहेज का बढ़ता हुआ पाप, कल्याण, जून, 1995
9. चार्ल्स विनिक, डिक्शनरी ऑफ एन्थ्रोपोलॉजी
10. पी.वी. यंग, साइंटिफिक सोशेल सर्वेज एण्ड रिसर्च